

स्वतंत्र भारत के महत्वपूर्ण नरिणय

- वर्ष 1950 में अधनियमति भारत का संवधिन भारत के लोकतंत्र की आधारशलि रहल है। इसके लागू होने के बाद इसमें कई संशोधन हुए हैं।
- सर्वोच्च न्यायालय संवधिन का अंतमि व्याख्याकार है और अपनी रचनात्मक एवं अभनव व्याख्या द्वारा हमारे मौलिक अधिकारों तथा संवधानिक स्वतंत्रता का रक्षक रहल है।

केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)

मुख्य वषिय:

- इसके अंतर्गत संवधिन की 'आधारभूत संरचना' (Basic Structure) का ऐतहिसक सिद्धांत दिया गया थल।
- यह इस कारण से अद्वितीय थल कि इसने लोकतांत्रिक शक्ति के संतुलन में बदलाव कयल। इससे पहले के नरिणयों में यह कहा गया थल कि संसद एक उच्चति वधियी प्रक्रिया के माध्यम से मौलिक अधिकारों में संशोधन कर सकती है।
- लेकिन इस मामले में नरिणय लयल गया कि संसद संवधिन की मूल संरचना अर्थात् 'बुनियादी संरचना' में संशोधन या परिवर्तन नहीं कर सकती है।
- इसके अलावा केशवानंद प्रकरण इस मायने में महत्वपूर्ण थल कि सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय संवधिन की अखंडता के संरक्षण के कार्य को स्वयं स्वीकार कयल।
- न्यायालय द्वारा तैयार बुनियादी संरचना का सिद्धांत न्यायिक रचनात्मकता के शखर का प्रतिनिधित्व करता है और दुनिया भर की अन्य संवधानिक अदालतों के लिये एक बेंचमार्क नरिधारति करता है।
- इस सिद्धांत ने यह नरिणय दिया कि यदि संवधिन की मूल संरचना से छेड़खानी की गई तो इस संवधिन संशोधन को अमान्य कयल जा सकता है।

मूल संरचना के सिद्धांत का विकास

- भारतीय संवधिन को अपनाने के बाद से ही संवधिन के प्रमुख प्रावधानों में संशोधन करने की संसद की शक्ति पर बहस शुरू हो गई है।
- स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में सर्वोच्च न्यायालय ने संवधिन में संशोधन करने के लिये संसद को पूर्ण शक्ति प्रदान की, जैसा कि शंकरि प्रसाद मामले (1951) और सज्जन सहि मामले (1965) के नरिणयों में देखा गया थल।
- इसका अर्थ है कि संसद के पास मौलिक अधिकारों सहति संवधिन के किसी भी भाग को संशोधति करने की शक्ति थी।
- हालाँकि गोलकनाथ मामले (1967) में सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि संसद मौलिक अधिकारों में संशोधन नहीं कर सकती है और यह शक्ति केवल संवधिन सभा के पास होगी।
- न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 368 के तहत संशोधन यदि भाग III द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकार को "नरिस्त करता है" तो यह शून्य है।
- वर्ष 1970 के दशक की शुरुआत में तत्कालीन सरकार द्वारा आरसी कूपर बनाम भारत संघ (1970), मदनराव सधिया बनाम भारत संघ (1970) आदि मामलों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिये गए नरिणयों को बदलने के लिये संवधिन (24, 25, 26 और 29वें संवधानिक संशोधन द्वारा) में व्यापक संशोधन कयल गए।
- यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि आरसी कूपर मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इंदिरा गांधी सरकार के 'बैंकों का राष्ट्रीयकरण' कयल जाने के नरिणय को अवैध घोषति कयल थल। जबकि माधवराव सधिया मामले में पूर्व शासकों को दी जाने वाली 'प्रवि परस' को समाप्त करने संबंधी संशोधन को अवैध घोषति कयल गया थल।
- सरकार द्वारा लाए गए सभी चार संशोधनों को केशवानंद भारती मामले में चुनौती दी गई थी।

मेनका गांधी बनाम भारत संघ (1978)

मुख्य वषिय:

भारत के संवधिन के तहत 'जीवन के अधिकार' अर्थ का वसितार करना।

- वर्ष 1977 में मेनका गांधी का पासपोर्ट वर्तमान सत्तारूढ़ जनता पार्टी सरकार द्वारा ज़ब्त कर लयल गया थल।
- जवाब में उन्होंने सरकार के आदेश को चुनौती देने के लिये सुप्रीम कोर्ट में एक याचिका दायर की।
- इस मामले में अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और व्यक्तगित स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान कयल गया है जो यह सुनिश्चित करता है कि कानून द्वारा स्थापति प्रक्रिया के अनुसार कोई भी व्यक्ति अपने जीवन या व्यक्तगित स्वतंत्रता से वंचति नहीं होगा।

- इस नरिणय के अस्तित्व में आने से पहले अदालतों को किसी भी कानून पर सवाल उठाने की अनुमति नहीं दी गई थी, चाहे वह कानून के अनुकूल हो या ना हो, चाहे वह जीवन के अधिकार या व्यक्तिगत स्वतंत्रता के उल्लंघन के मामले में मनमाना या दमनकारी क्यों न हो।
- हालाँकि अनुच्छेद 21 के तहत अपने आप को ठोस समीक्षा की शक्ति देकर न्यायालय ने पर्यवेक्षक से संविधान के प्रहरी का रूप धारण कर लिया।
- मेनका गांधी मामले में सुप्रीम कोर्ट के नरिणय का प्रभावी रूप से मतलब था कि अनुच्छेद 21 के संदर्भ में 'कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया' के साथ 'कानून की उचित प्रक्रिया' को ध्यान में रखा जाएगा।
- बाद के एक नरिणय में सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि अनुच्छेद 21 के अनुसार कोई भी व्यक्ति वैध कानून द्वारा स्थापित न्यायसंगत और उचित प्रक्रिया के अलावा अपने जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं होगा।

मोहम्मद अहमद खान बनाम शाहबानो बेगम (1985)

मुख्य वषिय:

- व्यक्तिगत धार्मिक कानूनों की पवित्रता पर सवाल उठाना और एक समान नागरिक संहिता पर बहस को आगे बढ़ाना।
- अप्रैल 1985 में सुप्रीम कोर्ट ने मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम (शाह बानो) मामले में तलाकशुदा मुस्लिम महिला को अपने पूर्व पति से नरिवाह योग्य आय प्राप्त करने के अधिकार के बारे में नरिणय सुनाया।
- इसे भारत में अधिकारों के लिये मुस्लिम महिलाओं की लड़ाई और मुस्लिम परसनल लॉ के खिलाफ लड़ाई में एक मील के पत्थर के रूप में देखा जाता है। इसने हज़ारों महिलाओं के वैध दावे के लिए आधार तैयार किया, जिनकी उन्हें पहले अनुमति नहीं थी।
- हालाँकि मुस्लिम धर्मगुरुओं के दबाव में शाह बानो को अपने पति से मिलने वाला भत्ता त्यागना पड़ा और बाद में राजीव गांधी सरकार ने न्यायालय के नरिणय को ही पलट दिया था। वर्ष 2001 में सर्वोच्च न्यायालय ने डेनयिल लतीफी मामले की सुनवाई के दौरान शाह बानो केस के नरिणय को पुनः सही ठहराते हुए तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के लिए भत्ता सुनिश्चित कर दिया।

इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ (1992)

मुख्य वषिय: आरक्षण की संवैधानिकता से संबंधित नरिणय देना।

- इंद्रा साहनी मामले (1992) में अदालत ने सरकार के नरिणय को बरकरार रखा और घोषणा की कि ओबीसी के उन्नत वर्गों (यानी क्रीमी लेयर) को आरक्षण के लाभार्थियों की सूची से बाहर रखा जाए। साथ ही यह भी नरिणय दिया कि एससी और एसटी वर्ग को क्रीमी लेयर की अवधारणा से बाहर रखा जाना चाहिये।
- इसी वाद में सुप्रीम कोर्ट ने आरक्षण कोटे की सीमा को 50% कर दिया।
- सर्वोच्च न्यायालय ने इंद्रा साहनी बनाम भारत संघ मामले में अनुच्छेद 16 (4) के संदर्भ में नरिणय देते हुए कहा कि अनुच्छेद 16 (4) में दिया गया आरक्षण केवल आरंभिक नयुक्तितक है, प्रोन्नति में नहीं।
- अतः इंद्रा साहनी वाद में यह स्पष्ट कहा गया है कि आरक्षण प्रोन्नति में नहीं दिया जा सकता।
- बाद में 77वाँ संविधान संशोधन किया गया और संविधान में अनुच्छेद 16 (4A) जोड़ा गया, इसके अनुसार उस स्थिति में अनुसूचित जात और अनुसूचित जनजात को प्रोन्नति में दिये गए आरक्षण को जारी रखने की बात कही गई यदि राज्य को लगता है कि उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है।
- 85वें संविधान संशोधन द्वारा SC/ST को प्रोन्नति में परिणामी वरिष्ठता प्रदान करने की बात कही गई है।

वशिखा बनाम राजस्थान राज्य (1997)

मुख्य वषिय:

- कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न को रोकने के लिये दशिया-नरिदेश जारी करना।
- वशिखा बनाम राजस्थान राज्य (वशिखा) मामले में कार्यस्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न के संदर्भ में न्यायिक सक्रियता अपने शिखर पर पहुँच गई।

नरिणय कई कारणों से अभूतपूर्व था:

- भारत में पहली बार 'यौन उत्पीड़न' को आधिकारिक रूप से परिभाषित किया गया था।
- भारत में चूँकि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संबंधित कोई कानून नहीं था, इसलिये अदालत ने कहा कि 'दिकन्वेंशन ऑन द एलिमिनेशन ऑफ ऑल फॉर्म ऑफ डिसक्रिमिनेशन अगेंस्ट वुमन' (CEDAW- 1980, भारत द्वारा हस्ताक्षरित) के आधार पर दशिया-नरिदेश बनाए जाएंगे।
- अपने नरिणय को सही ठहराने के लिये अदालत ने कई स्रोतों का हवाला दिया, इसमें न्यायपालिका की स्वतंत्रता के सिद्धांतों का बीजिंग स्टेटमेंट, ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय का एक नरिणय और उसके पहले के अन्य नरिणय शामिल हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने नमिनलखित महत्त्वपूर्ण दशिया-नरिदेश दिये:

- 'वशिखा बनाम राजस्थान राज्य' मामले में फैसला सुनाते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि 'ऐसा कोई भी अपरिहाव-भाव, व्यवहार, शब्द या कोई पहल जो यौन प्रकृतिकी हो, उसे यौन उत्पीड़न माना जाएगा।

- अपने इस नरिणय में न्यायालय ने एक अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार वधिदिकनवेंशन ऑन द एलमिनिशन ऑफ ऑल फॉर्मस ऑफ डस्क्रिमिनिशन अगैस्ट वुमन' (CEDAW) का संदर्भ लेते हुए कार्यस्थलों पर महिला कर्मियों की सुरक्षा के मद्देनजर कुछ दशा-नरिदेश जारी किये, जिन्हें **वशिखा दशा-नरिदेश के नाम से जाना जाता है, जो इस प्रकार हैं:**
 - प्रत्येक रोजगार प्रदाता का यह दायित्व होगा कियौन उत्पीड़न के नवारण के लिये वह कंपनी की आचार संहिता में एक नयिम शामिल करे।
 - संगठनों को अनवार्य रूप से एक शकियत समिति की स्थापना करनी चाहिये, जिसकी प्रमुख कोई महिला होनी चाहिये।
 - नयिमों के उल्लंघनकर्ता के वरिद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जानी चाहिये और पीड़िता के हतियों की रक्षा की जानी चाहिये।
 - महिला कर्मचारियों को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया जाना चाहिये।
- वस्तुतः इस ऐतिहासिक नरिणय में न्यायालय ने माना कियौन उत्पीड़न की कोई भी घटना संवधान में अनुच्छेद 14, 15 और 21 के तहत दिये गए मौलिक अधिकारों तथा अनुच्छेद 19 (1) के तहत व्यक्तगत स्वतंत्रता का उल्लंघन है।
- उल्लेखनीय है कवशिखा दशा-नरिदेशों के अनुसरण में ही नवंबर 2010 में 'कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के वरिद्ध महिला सुरक्षा वधियक' अस्तित्व में आया।
- कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा के माध्यम से देश में महिला सशक्तीकरण की दशा में वशिखा दशा-नरिदेशों का उल्लेखनीय महत्त्व है।
- कार्यस्थलों के प्रभारी, सभी नयिकताओं या व्यक्तियों को यौन उत्पीड़न रोकने के लिये प्रयास करना चाहिये और यदि कोई व्यक्ता भारतीय दंड संहिता, 1860 या कसिी अन्य कानून के तहत कसिी वशिष अपराध के लिये दोषी है, तो उन्हें दोषी को दंडित करने के लिये उचित कार्रवाई करनी चाहिये।

अरुणा रामचंद्र शानबाग बनाम भारत संघ (2011)

- **मुख्य वषिय:** संवधानिक होने के नाते नषिकरयि इच्छा-मृत्यु को स्वीकार करना।
- अरुणा शानबाग बनाम यूनयिन ऑफ इंडिया (2011) मामले में पहली बार इच्छा-मृत्यु का मुद्दा सार्वजनिक चर्चा में आया।
- इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने अरुणा की इच्छा-मृत्यु की याचिका स्वीकारते हुए मेडिकल पैनल गठित करने का आदेश दिया था। हालाँकि बाद में न्यायालय ने अपना फैसला बदल दिया था।
- लेकिन इस नरिणय ने असाध्य रोगों से पीड़ित व्यक्तियों को इच्छा-मृत्यु देने की बहस को आगे बढ़ाने का कार्य कया।
- इसके बाद एक ऐतिहासिक नरिणय (2018) में सर्वोच्च न्यायालय ने **पैसवि यूथेनेसिया** और **"लविगि वलि"** को मान्यता दी।

क्या है एकटवि और पैसवि यूथेनेसिया?

- 'एकटवि यूथेनेसिया' और 'पैसवि यूथेनेसिया' इन दोनों ही शब्दों का प्रयोग 'इच्छा-मृत्यु' को इंगित करने हेतु कया जाता है।
- 'एकटवि यूथेनेसिया' वह स्थिति है, जब इच्छा-मृत्यु चाहने वाले कसिी व्यक्त को इस कृत्य में सहायता प्रदान की जाती है, जैसे- जहरीला इंजेक्शन लगाना आदि।
- वहीं 'पैसवि यूथेनेसिया' वह स्थिति है, जब इच्छा-मृत्यु के कृत्य में कसिी प्रकार की कोई सहायता प्रदान नहीं की जाती।
- एक वाक्य में कहें तो एकटवि यूथेनेसिया वह है, जिसमें मरीज की मृत्यु के लिये कुछ कया जाए, जबकि पैसवि यूथेनेसिया वह है जहाँ मरीज की जान बचाने के लिये कुछ न कया जाए।

क्या है लविगि वलि का मामला?

- महाराष्ट्र के लावते दंपति के अलावा एनजीओ 'कॉमन कॉज' ने हाल में सुप्रीम कोर्ट में याचिका दाखल कर कहा था क संवधान के अनुच्छेद 21 के तहत जिस तरह नागरिकों को जीने का अधिकार दिया गया है, उसी तरह उन्हें मरने का भी अधिकार है।
- जबकि केंद्र सरकार का मानना है क इच्छा-मृत्यु की वसियत (लविगि वलि) लिखने की अनुमति नहीं दी जा सकती, हालाँकि मेडिकल बोर्ड के नरिदेश पर मरणासन्न व्यक्तिका 'लाइफ सपोर्ट सिस्टम' हटाया जा सकता है।

ललि थॉमस बनाम भारत संघ (2013)

मुख्य वषिय:

- 10 जुलाई, 2013 को ललि थॉमस बनाम भारत संघ मामले में कहा गया था क एक सांसद या वधियक जो क अपराध के लिये दोषी पाया जाता है, को न्यूनतम दो वर्ष का कारावास दिया जाएगा और वह सदन की सदस्यता तत्काल प्रभाव से खो देगा तथा उसे जेल अवधि समाप्त होने के बाद छह वर्ष के लिये चुनाव लड़ने से वंचित कया जाएगा।
- जनप्रतनिधित्व कानून (RPA) -1951 की धारा 8 (1) और (2) के अंतर्गत प्रावधान है क यदि कोई वधियक सदस्य (सांसद अथवा वधियक) हत्या, बलात्कार, असपृश्यता, वदिशी मुद्रा वनियिमन अधनियिम के उल्लंघन; धर्म, भाषा या क्षेत्र के आधार पर शत्रुता पैदा करना, भारतीय संवधान का अपमान करना, प्रतबिधित वस्तुओं का आयात या नरियात करना, आतंकवादी गतिविधियों में शामिल होना जैसे अपराधों में लपित होता है, तो वह इस धारा के अंतर्गत अयोग्य माना जाएगा एवं उसे 6 वर्ष की अवधि के लिये अयोग्य घोषित कर दिया जाएगा।
- वहीं इस अधनियिम की धारा 8 (3) में प्रावधान है क उपर्युक्त अपराधों के अलावा कसिी भी अन्य अपराध के लिये दोषी ठहराए जाने वाले कसिी भी वधियक सदस्य को यदि दो वर्ष से अधिक के कारावास की सज़ा सुनाई जाती है तो उसे दोषी ठहराए जाने की तिथि से अयोग्य माना जाएगा। ऐसे

व्यक्तिको सज़ा पूरी किये जाने की तथिसे 6 वर्ष तक चुनाव लड़ने के लिये अयोग्य माना जाएगा ।

- हालाँकि धारा 8 (4) में यह भी प्रावधान है कि यदि दोषी सदस्य नचिली अदालत के आदेश के खिलाफ तीन महीने के भीतर उच्च न्यायालय में अपील दायर कर देता है तो वह अपनी सीट पर बना रह सकता है ।
- कति 2013 में 'ललि थॉमस बनाम यूनियन ऑफ इंडिया' मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इस धारा को असंवैधानिक घोषित कर नरिस्त कर दिया था ।

न्यायमूर्त के.एस. पुट्टास्वामी बनाम भारत संघ (2017)

मुख्य वषिय: नजिता का अधिकार एक मौलिक अधिकार है, जिसे अनुच्छेद 21 के अंतर्गत संरक्षण प्राप्त है ।

- न्यायालय ने कहा है कि दरअसल इस मामले की सुनवाई के दौरान एटॉर्नी जनरल के.के. वेणुगोपाल का कहना था कि नजिता एक इलीट अवधारणा है यानी प्राइवेट खाले-पीते घरों की बात है और नजिता का वचिर बहुसंख्यक समाज की ज़रूरतों से मेल नहीं खाता । लेकिन संविधान के पहरेदार उच्चतम न्यायालय ने कहा कि 'ज़रूरतमंद लोगों को बस आर्थिक तरक्की चाहिये, नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार नहीं', यह कहना उचित नहीं है ।

मामले की पृष्ठभूमि

वर्ष 1954 में एम.पी. शर्मा मामले में 8 जजों की और वर्ष 1962 में खड़क सहि मामले में 6 जजों की खंडपीठ ने नजिता को मौलिक अधिकार नहीं माना था । अतः इसी वर्ष जब इस संबंध में उच्चतम न्यायालय ने सुनवाई आरंभ की तो न्यायालय के नौ जजों की खंडपीठ बठिाई गई ।

- दरअसल सबसे पहले वर्ष 2013 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय में आधार की संविधानिक वैधता को चुनौती देते हुए एक जनहति याचिका दायर की गई थी । न्यायमूर्त चेलामेश्वर की अध्यक्षता वाली तीन जजों की पीठ ने 11 अगस्त, 2015 को नरिणय दिया कि आधार का इस्तेमाल केवल सार्वजनिक वरिणय प्रणाली (पीडीएस) और एलपीजी कनेक्शनों के लिये ही जाए ।
- कुछ ही दिनों के बाद तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश एच.एल दत्तु की अध्यक्षता वाली खंडपीठ ने मनरेगा सहति कई अन्य योजनाओं में आधार के इस्तेमाल की इजाज़त दे दी । तत्पश्चात् शीर्ष न्यायालय में एक और याचिका दायर की गई कि क्या आधार मामले में नजिता के आधार का उल्लंघन हुआ है और क्या नजिता एक मौलिक अधिकार है?
- संविधान का भाग 3 जो कुछ अधिकारों को 'मौलिक' मानता है, में नजिता के अधिकार का जकिर नहीं किया गया है । इन सभी बातों का संज्ञान लेते हुए इस वर्ष जुलाई में नौ जजों की संविधानिक पीठ ने मामले की सुनवाई आरंभ कर दी और नमिनलखिति बठिाओं पर वचिर करना शुरू कर दिया ।
 - नजिता के अधिकार का दायरा क्या है?
 - क्या नजिता का अधिकार सामान्य कानून द्वारा संरक्षित अधिकार है या एक मौलिक अधिकार है?
 - नजिता की श्रेणी कैसे तय होगी?
 - नजिता पर क्या प्रतिबंध हैं?
 - क्या नजिता का अधिकार, समानता का अधिकार है या फरि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का?

न्यायालय का नरिणय

- शीर्ष अदालत ने अपने नरिणय में कहा है कि जिने का अधिकार, नजिता के अधिकार और स्वतंत्रता के अधिकार को अलग-अलग करके नहीं बल्कि एक समग्र रूप देखा जाना चाहिये ।
- न्यायालय के शब्दों में "नजिता मनुष्य के गरमिपूरण असतत्व का अभिन्न अंग है और यह सही है कि संविधान में इसका जकिर नहीं है, लेकिन नजिता का अधिकार वह अधिकार है, जिसे संविधान में गढ़ा नहीं गया बल्कि मान्यता दी है ।
- संविधान नजिता के अधिकार को संरक्षण देता है क्योंकि यह जीवन के अधिकार और व्यक्तित्व स्वतंत्रता के अधिकार का एक बाईप्रोडक्ट है । नजिता का अधिकार, स्वतंत्रता और सम्मान के साथ जिने के अन्य मौलिक अधिकारों के साहचर्य में लोकतंत्र को मज़बूत बनाएगा ।
- नजिता की श्रेणी तय करते हुए न्यायालय ने कहा कि नजिता के अधिकार में व्यक्तित्व रुझान और पसंद को सम्मान देना, पारिवारिक जीवन की पवतिरता, शादी करने का फंसला, बच्चे पैदा करने का नरिणय, जैसी बातें शामिल हैं ।
- कसिी का अकेले रहने का अधिकार भी नजिता के तहत आएगा । नजिता का अधिकार कसिी व्यक्तिकी नजिी स्वायत्तता की सुरक्षा करता है और जीवन के सभी अहम पहलुओं को अपने तरीके से तय करने की आज़ादी देता है ।
- न्यायालय ने यह भी कहा है कि अगर कोई व्यक्ति सार्वजनिक जगह पर हो तो इसका अर्थ यह नहीं कि वह नजिता का दावा नहीं कर सकता ।
- अन्य मूल अधिकारों की तरह ही नजिता के अधिकार में भी युक्तियुक्त नरिबंधन की व्यवस्था लागू रहेगी, लेकिन नजिता का उल्लंघन करने वाले कसिी भी कानून को उचित और तरकसंगत होना चाहिये ।
- न्यायालय ने यह भी कहा है कि नजिता को केवल सरकार से ही खतरा नहीं है बल्कि गैर-सरकारी तत्वों द्वारा भी इसका हनन किया जा सकता है । अतः सरकार डेटा संरक्षण का पर्याप्त प्रयास करे ।
- न्यायालय ने सूक्ष्मता से अवलोकन करते हुए कहा है कि कसिी व्यक्तिके बारे में जानकारी जुटाना उस पर काबू पाने की प्रक्रिया का पहल कदम है' । अतः ऐसी सूचनाएँ कहाँ रखी जाएंगी, उनकी शर्तें क्या होंगी, कसिी प्रकार की चूक होने पर जवाबदेही कसिकी होगी? इन पहलुओं पर गौर करते हुए कानून बनाया जाना चाहिये ।

पुट्टास्वामी (2017) नरिणय के तहत आनुपातिक परीक्षा

यह माना जाता है कि गोपनीयता एक प्राकृतिक अधिकार है जो सभी व्यक्तियों को वरिस्त में मलिता है और यह अधिकार केवल राजकीय कार्रवाई द्वारा नमिनलखिति 3 परस्थितियों में प्रतिबंधित किया जा सकता है:

- सबसे पहले, ऐसी राजकीय कार्रवाई में एक वधियायी जनादेश होना चाहिये;
- दूसरा, यह एक वैध राजकीय उद्देश्य का पालन करता हो; तथा
- तीसरा, यह आनुपातिक होना चाहिये, जैसे कि राज्य द्वारा की गयी कार्रवाई - इसकी प्रकृति और सीमा दोनों एक लोकतांत्रिक समाज के अनुरूप होनी चाहिये और कार्रवाई को पूरा करने के लिए उपलब्ध वकिलों में से कम से कम घुसपैठ होनी चाहिये।

नवतेज सहि जौहर बनाम भारत संघ (2018)

मुख्य वषिय: भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 377 को अवैध ठहराना और समलैंगिकता को वैधता प्रदान करना।

- इसने 2013 के नरिणय को संवैधानिक रूप से अस्वीकार कर दिया। सर्वोच्च न्यायालय समलैंगिकता को अपराध मानने को चुनौती देने वाली याचिकाओं के एक समूह पर सुनवाई कर रहा था।
- याचिका ने धारा 377 को इस आधार पर चुनौती दी कि यह अस्पष्ट थी और इसने संवधान के अनुच्छेद 14, 15, 19 और 21 के तहत गारंटीकृत समानता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, मानवीय गरमा और नजिता की सुरक्षा के संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन किया।
- न्यायालय ने अपने नरिणय में कहा है कि "यह एक व्यक्ति की अपनी पसंद का मामला है कि कौन उसके घर में प्रवेश करता है, वह कैसे रहता है और वह किससे संबंध स्थापति करना चाहता है"।
- न्यायालय ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि किसी व्यक्ति का समलैंगिक होना भी उसका अपना नजि मामला है और नजिता अब उसका मूल अधिकार है।

क्या है धारा 377?

- भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 377 का संबंध अपराकृतिक शारीरिक संबंधों से है। इसके अनुसार यदि दो लोग आपसी सहमति अथवा असहमति से आपस में अपराकृतिक संबंध बनाते हैं और दोषी करार दिये जाते हैं तो उनको 10 वर्ष से लेकर उम्रकैद तक की सज़ा हो सकती है। अधिनियम में इस अपराध को संज्ञेय तथा गैर-जमानती माना गया है।
- यद्यपि व्यक्ति के चयन की स्वतंत्रता को महत्व देते हुए 2009 में हाईकोर्ट ने आपसी सहमति से एकांत में बनाए जाने वाले समलैंगिक संबंधों को अपराध के दायरे से बाहर करने का नरिणय दिया था। कति 2013 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समलैंगिकता की स्थिति में उम्रकैद के प्रावधान को पुनः बहाल करने का फैसला सुनाया गया।

उपरोक्त नरिणयों ने मूल संवधान में नति नए नवाचारों के माध्यम से इसके प्रगतिशील होने के वचिर को साकार किया है तथा यह अनवरत् जारी है, इसे तीन तलाक, सबरीमाला मंदिर में प्रवेश आदि नरिणयों के माध्यम से समझा जा सकता है।

PDF Refernece URL: <https://www.drishtias.com/hindi/printpdf/important-judgements-of-independent-india>